



विपश्यना

[साधकों का मासिक प्रेरणापत्र]

रजि. नं. १९१५६/७१

पोस्टल रजि. नं. NSK - 64

वर्ष ७ • बम्बई • बुद्धवर्ष २५२२ • ज्येष्ठ पूर्णिमा [शक] • दि. २०-६-१९७८ • अंक १३

विपश्यना-विशेषांक

मदन्त डॉ. धम्मरतनजी (एम. ए. डी. फिल.)

(अन्तरराष्ट्रीय ख्याति प्राप्त अंग्रेजी मासिक 'दि महाबोधि' के विशेषांक वर्ष ८५, अंक ८-१०, अगस्त-अक्टूबर, १९७७ के संपादकीय लेख का हिन्दी अनुवाद)

हमें इस बात की प्रसन्नता है कि हम बर्मा के सयाजी ऊ बा खिन द्वारा सिखाई गई "विपश्यना" साधना-विधि पर आधारित यह विशेषांक प्रकाशित कर पा रहे हैं।

विपश्यना बुद्ध निर्देशित आर्य-आष्टांगिक मार्ग का अंतिम और अत्यंत महत्वपूर्ण अंग है। यह मार्ग तीन विभागों में विभक्त है- शील, समाधि और प्रज्ञा। विपश्यना ही प्रज्ञा की वह अंतिम कड़ी है जिसके द्वारा अन्तर्मुखी होकर अनित्य, दुःख और अनात्म का साक्षात्कार करते हुए परम सत्य याने निर्वाणिक अवस्था का साक्षात्कार हो सकता है। इसके लिए प्रथम दो याने शील और समाधि का होना आवश्यक है।

भगवान बुद्ध के समय से ही उनके सभी अनुयायियों में विपश्यना भावना का अभ्यास समान रूप से प्रचलित रहा। परन्तु बाद में चमत्कारिक सिद्धियाँ हासिल करने के उद्देश्य से कुछ अंशों में केवल समाधि (चित्त की एकाग्रता) पर ही जोर दिया जाने लगा और इस प्रकार विपश्यना भावना का अभ्यास बहुत थोड़े से व्यक्तियों और समूहों तक ही सीमित रह गया, जिन्होंने कि इसे किसी न किसी रूप में जीवित रखा।

भगवान बुद्ध की २५०० वीं जयन्ती के समय से बौद्ध देशों में विपश्यना भावना के प्रति एक नई जागृति पैदा हुई। इस क्षेत्र में बर्मा ने बहुत बड़ी भूमिका अदा की। वहाँ अनेक साधना केंद्रों की स्थापना हुई जहाँ अनेक अनुभवी आचार्य अपने-अपने अनुभवों के आधार पर साधना के विभिन्न पक्षों का प्रशिक्षण देने लगे।

स्व. सयाजी ऊ बा खिन उन आचार्यों में से एक थे जिन्होंने कि बिना किसी भेदभाव के सभी जिज्ञासु धर्म प्रेमियों को विपश्यना भावना का उन्मुक्त रसास्वादन कराया। उन्होंने बताया कि किस तरह विपश्यना का अभ्यास करके आदमी अपने दैनिक जीवन के सभी प्रकार

धम्म वाणी

अट्ठङ्गिको अरिय पथो जनानं
मोक्खप्पवेसो युजुकोवमग्गो ।
धम्मो अयं संतिकरो पणीतो
नीय्याणिको तं पणमभि धम्मं ॥

यह जो आर्य-जनो के उपयुक्त आष्टांगिक मार्ग है, यह जो मोक्ष प्राप्ति के लिए सीधा सरल रास्ता है, यह जो सर्वश्रेष्ठ शान्तिदायक धर्म है और यह जो निर्वाण की ओर ले जाने वाला है; मैं ऐसे धर्म को प्रणाम करता हूँ।

के खिंचाव-तनावों को दूर करते हुए सुखी जीवन जी सकता है। अतः लोगों में इसके प्रति आकर्षण पैदा होना स्वाभाविक था। ऊ बा खिन स्वयं एक व्यवहार-कुशल, कर्मठ और उन्नत शासनाधिकारी रहे। आपने बर्मी सरकार के अकाउन्टेन्ट जनरल का महत् पदभार संभालते हुए एक साथ कई अन्य विभागों के अध्यक्षपद का भार भी वहन किया था (इस बारे में विशेष जानकारी के लिए 'दि महाबोधि' का ऊ बा खिन विशेषांक वर्ष ८०, ४ नवम्बर, १९७२ दर्शनीय है।)

आचार्य श्री सत्यनारायण गोयन्का जो कि आज भारत तथा विश्व में विपश्यनाचार्य के रूप में प्रसिद्ध हैं, सयाजी ऊ बा खिन के प्रमुख एवं तेजस्वी शिष्य हैं। आप लगभग १४ वर्ष तक बर्मा में अपने आचार्य के सान्निध्य में अभ्यास व प्रशिक्षण प्राप्त कर विगत १९६९ में भारत आए और तभी से यहाँ स्थान-स्थान पर विपश्यना-शिविर लगाते रहे हैं। वस्तुतः आपने अपना सारा जीवन धर्मदान द्वारा दुःख-संतप्त मानवता की सेवा के लिए अर्पित कर रखा है।

पिछले छह वर्षों तक श्री गोयन्काजी भारत के विभिन्न प्रदेशों में स्थानीय लोगों के आमंत्रण पर विपश्यना साधना के शिविर लगाते रहे हैं। परन्तु ऐसे अधिकांश स्थानों पर ध्यान-भावना के उपयुक्त आवश्यक व्यवस्था, सुविधा और वातावरण उपलब्ध नहीं होता था जिससे कि व्यक्ति साधना का पूरा-पूरा लाभ उठा सकता। अतः यह मह-सूस किया गया कि ऐसा कोई केन्द्र स्थापित हो, जहाँ पर कि हर संभव सुविधाएं उपलब्ध करा कर साधक को विपश्यना का पूरा पूरा लाभ

दिया जा सके। इसके फलस्वरूप दो वर्ष पूर्व बम्बई के समीप इगतपुरी (महाराष्ट्र) में 'विपश्यना विश्व विद्यापीठ' नामक एक बड़े केन्द्र की स्थापना की गई। अब यह कार्यरत हो चुका है और वर्ष के अधिकांश शिविर तथा विशेष गंभीर शिविर यहीं पर आयोजित होते हैं। फिर भी देश के सभी भागों के लोग अनेक असुविधाओं के कारण इगतपुरी नहीं पहुँच सकते। अतः ऐसे लोगों के लाभार्थ श्री गोयन्काजी को अब भी कुछ शिविर बाहर देने पड़ते हैं।

अक्टूबर ७७ तक श्री गोयन्काजी १४१ शिविर लगा चुके हैं। इनमें विभिन्न समुदायों व क्षेत्रों के लगभग १३ हजार साधक/साधिकाओं ने लाभ उठाया है जिनमें इंजीनियर, डाक्टर, प्रोफेसर, कलाकार, जज, वकील, सरकारी अधिकारी/कर्मचारी, व्यापारी, मजदूर, किसान तथा अनपढ़ तक सम्मिलित हैं। हिंदू, मुसलमान, बौद्ध, जैन, सिक्ख, ईसाई, क्रिश्चियन, पारसी आदि सभी प्रमुख समुदायों के अनुयायियों ने भाग लिया है। दस दिन के शिविर के अंत में लोगों के मुँह से अपने स्वयं के उदात्त अनुभव व कल्याणकारी उपलब्धियों का विवरण सुनकर मन प्रसन्नता से भर उठता है।

'महाबोधि' जनरल के पाठकों व अन्य अनेकों के लाभ को ध्यान में रखकर हमने यह विशेषांक प्रकाशित करनेका निश्चय किया, जिसमें विभिन्न श्रेणी के साधकों के लेख व अनुभव की टिप्पणियाँ आदि सम्मिलित हैं।

पाठक देखेंगे कि विपश्यना का अभ्यास किस तरह से लोगों के लिए बहुविध मंगलदायी साबित हुआ है। एक व्यापारी साधक ने लिखा है कि कितनी व्यस्तता का जीवन बिताते हुए वह भांति-भांति की चिंताओं और तनावों से भरकर शारीरिक व मानसिक रोगों से ग्रस्त था और विपश्यना के अभ्यास से कैसे इन सब से छूटकर सुखी और शांत जीवन बिताने में सफल हो सका है।

एक दूसरे साधक का कहना है कि अनचाही बातों के विकर्षण (पलायनवादी वृत्ति) में उलझकर वह किस तरह अधिकाधिक गांठें ही बांधे जा रहा था। आखिर विपश्यना के अभ्यास से ही यह विद्या मिली जिससे कि 'सादा जीवन, उच्च विचार' के द्वारा शांति और सुख प्राप्त किए जा सकते हैं।

एक तीसरे साधक का कहना है कि कैसे वह अपने दुःखों का कारण सदैव दूसरों पर ही थोपता रहा, जब कि विपश्यना ने यह रहस्य उद्घाटन किया कि वह कितना गलत था। उसने पाया कि स्वानुशासन-हीन आवारागर्दी का जीवन ही उसके सारे दुःखों का मूल कारण था और विपश्यना के अभ्यास द्वारा वह शांतिपूर्वक जीवन बिताते हुए परिवार तथा समाज के लिए एक उपयोगी अंग साबित हो सका है।

एक चौथी साधिका का कहना है कि किस प्रकार सुख व शांति की खोज में वह एक के बाद दूसरे धर्मगुरुओं और योगाचार्यों के पास जाती रही, परंतु सर्वत्र निराशा ही हाथ लगी। अंततः सौभाग्य से श्री गोयन्काजी से मिली और उनसे विपश्यना सीखकर सचमुच वही प्राप्त किया जिसकी कि उसे जीवन भर की वास्तविक खोज थी।

हम देखते हैं कि किस तरह सभी साधक/साधिकाएँ एक या अनेक प्रकार के दुःखों में उलझे थे, जब कि विपश्यना से उन्हें वास्तविक

राहत मिली। सब के सब समानरूप से दुःख-संतप्त थे और इसीलिए विपश्यना के पथ पर आए तथा सब के सब समानरूप से दुःख-विमुक्ति का अनुभव प्राप्त कर सके। एक बार भगवान बुद्ध ने अपने शिष्यों को कहा, "आयुष्मानो! मैं केवल दो ही बातें सिखाता हूँ— 'यह दुःख है' और 'यह दुःख निरोध है'।" विपश्यना साधना यही है कि दुःख के अस्तित्व को स्वीकार करो और प्रज्ञापूर्वक उसका सामना करते हुए उसका निरोध कर लो। सचमुच अनेक लोगों पर इन शिविरों का बड़ा गहरा प्रभाव पड़ा है।

विपश्यना केवल उन्हीं लोगों तक सीमित नहीं है जो कि सामान्य रूप से वैध जीवन व्यतीत कर रहे हैं। बल्कि इसकी पहुँच जेलों तक भी हो चुकी है। राजस्थान सरकार के कुछ वरिष्ठ अधिकारी स्वयं विपश्यना के अभ्यास से गुजरे तो अत्यंत प्रभावित हुए। उन्होंने पाया कि इसके अभ्यास से मानव स्वभाव में बड़ा अंतर पड़ता है। अतः जेल में इसका प्रयोग करके कैदियों को लाभान्वित किया जाना चाहिए। प्रसंगानुसार आचार्य श्री गोयन्काजी आमंत्रित किए गए और उन्होंने जयपुर की जेल में कई शिविर लगाए जिनमें कि साधारण कैदी ही नहीं, बल्कि फांसी एवं आजन्म कारावास सजा प्राप्त अपराध-परिपक्व डकैत, कातिल आदि भी सम्मिलित किए गए। उन पर इन शिविरों का बहुत गहरा और आश्चर्यजनक प्रभाव पड़ा। उनमें से कईयों ने अपने अनुभवों के आधार पर जो अपने हृदय-उद्गार प्रकट किए वह बुद्धकालीन उदान वाक्यों की याद दिलाते हैं। उनके कुछ नमूने इस अंक में उद्धृत हैं और साथ ही जेल-शिविर की सर्वेक्षणार्थक रिपोर्ट भी जो कि इन शुभ परिणामों की यथार्थता को पुष्ट करती है।

जेल-रिपोर्टों के अतिरिक्त वाराणसी में लगे एक शिविर के दौरान 'बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय' के अनेक वैज्ञानिकों द्वारा शोध की रिपोर्ट व 'राजस्थान पुलिस अकादमी' में पुलिस अधिकारियों के लिए लगे शिविर की रिसर्च-रिपोर्ट भी प्रकाशित कर रहे हैं। आज कल यह तथ्य तो सर्वमान्य ही है कि मन और शरीर का बहुत गहरा संबंध है। विपश्यना-साधना के द्वारा जो मानसिक परिवर्तन होते हैं उनका प्रभाव शरीर पर आए बगैर नहीं रहता। उनका अध्ययन श्वास की गति, रक्तचाप, रसायनिक परिवर्तन आदि के आधार पर किया जा सकता है। अन्तर्मन की गहराइयों तक होने वाले सुधारों को इसी आधार पर जांचना पर्याप्त तो नहीं है परंतु जितनी दूरी तक जांच हो सकी उतनी तो संतोषप्रद है ही। इतनी जांच से ही यह प्रमाणित हुआ है कि विपश्यना कितनी लाभप्रद है।

कुछ लोगों के लिए साधना का अर्थ अलौकिक चमत्कारों की सिद्धियाँ उपलब्ध करना ही है। यह सच भी है कि समाधि की ऊँचाइयों पर पहुँच कर अभ्यास द्वारा 'अभिज्ञा' उपलब्ध कर चमत्कारिक सिद्धियाँ प्राप्त की जा सकती हैं। परन्तु यह तो एक प्रकार का उप-फल ही है। विपश्यना के लिए समाधि तो अवश्य अनिवार्य है परंतु यह सिद्धियाँ कदापि नहीं हैं। इनका महत्व केवल लौकिक और मानसिक ही हो सकता है, आध्यात्मिक नहीं। अध्यात्म से इनका कोई लेन-देन नहीं। बल्कि यह तो योगी के लिए उल्टे बाधक ही होती हैं। अतः विपश्यी साधक को हमेशा इस खतरे से सावधान रहने की चेतावनी दी जाती है। किसी

को कोई सिद्धि प्राप्त भी हो जाय तो उसे भी प्रकृति के गुण, धर्म, स्वभाव यथा अनित्य, दुःख, अनात्म के संदर्भ में ही देखने का निर्देश दिया जाता है।

बौद्ध साहित्य में हम पढ़ते हैं कि भगवान बुद्ध और उनके अनेक शिष्य अलौकिकता की पाँचों अभिज्ञाओं में दक्ष थे। कभी-कभी उन्होंने इनका उपयोग भी किया, परंतु साधकों को उच्च जीवन की ओर मोड़ने के लिए ही। लेकिन आगे चलकर कुछ दुःशील लोगों ने इनका दुरुपयोग करना शुरू किया, खासकर 'रिद्धि-शक्ति' का। उनमें देवदत्त का नाम सर्वोपरि है। इसीलिए विनय के एक नियम के अनुसार चमत्कारों का प्रयोग सर्वथा वर्जित कर दिया गया था। काफी लंबे अरसे तक इस नियम का पालन बराबर किया जाता रहा। लेकिन एक समय ऐसा भी आया जब केवल चमत्कारों का ही बोलबाला रहा। धर्म के नाम पर पंचमकारों की अशुद्धियों की होड़ लगी और वास्तविक धर्म छूट गया। कुछ एक इतिहासकारों का कहना है कि भारत में बौद्ध धर्म के नाश का यही कारण बना।

विपश्यनाचार्य श्री गोयन्काजी सदैव अपने साधकों को इस बात की चेतावनी देते रहते हैं कि विपश्यना-साधना चमत्कारों के लिए नहीं है। बल्कि यह 'जीवन जीने की एक कला है।' खिंचाव-तनावों से मुक्त रहकर कैसे सुखी जीवन जी सकें। यह वह विधा है जिसके अभ्यास से जीवन में आने वाली सभी प्रकार की समस्याओं का समतापूर्वक सामना करते हुए शांत, सुखी और लाभकारी जीवन जी सकते हैं।

आचार्य द्वारा इस बात पर बल दिया जाता रहता है कि साधक यह न समझ ले कि दस दिन के शिविर में सम्मिलित होकर वह जीवन भर की सारी बाधाओं से मुक्त हो गया और अनासक्त बन गया। बल्कि यह तो एक नन्हीं सी शुरुआत है, एक पकड़ है; जिसके द्वारा शरीर व मन की सम्पूर्ण सच्चाइयों का भेदन करते हुए मनुष्य जिन्दगी के सारे रास्ते सावधानी व समझदारी के साथ स्वयं तय करता है।

यह सच है कि विपश्यना का मुख्य लक्ष्य 'निर्वाण' प्राप्त करना है। धर्म का रास्ता कदम-कदम आगे बढ़ने का है (अनुपुब्बी पटिपदा) और सदा ऊपर (ऊँचे) ही ले जाने वाला (औप्पनेविको) होता है। इस रास्ते पर उठाया गया हर एक कदम सफलता के नजदीक ले जाने वाला होता है। साधक एक-एक कदम आगे बढ़ता है और उतना-उतना विमुक्ति-सुख अनुभव करते चलता है। प्रथम कदम से लेकर अंतिम कदम तक ऐसा अनुभव होते ही रहता है। परिणाम अनुभवगम्य है, अंधमान्यताजन्य नहीं। अनुभव होता है तो साधक औरों को भी 'आओ! और देखो' (एहिपस्सिको) कहने लगता है। ऐसा स्वाभाविक है। क्योंकि परिणाम काल्पनिक नहीं, ठोस हैं और अभी (अकालिको) प्राप्त होते हैं।

भगवान बुद्ध ने कहा, "समुद्र का केवल एक ही स्वाद होता है— 'खारापन' वैसे ही धर्म का भी केवल एक ही स्वाद है— मुक्ति-रस का स्वाद।" आरंभ से अंत तक धर्म का यही गुण विद्यमान रहता है। इसीलिए इसे आदि में कल्याणकारी, मध्य में कल्याणकारी, अंत में कल्याणकारी (आदि कल्याणो, मज्जे कल्याणो, परियोसन कल्याणो) कहा गया है।

विपश्यना शिविर में सम्मिलित होकर अभ्यास करते हुए साधक धर्मरस का आस्वादन कर उपस्थित दुःख से छुटकारा पाने ही लगता है। इसी आस्वादन के बल पर साधक आगे बढ़ता है और नितांत विमुक्त अवस्था को प्राप्त हो जाता है। इस अंक में जो भी लेख और टिप्पणियाँ प्रकाशित हो रही हैं उनमें साधकों के अनुभवों की प्रेरणाजनक झांकियाँ दीख पड़ती हैं। इनसे प्रेरित होकर यदि थोड़े से लोग भी धर्म-पथ पर आरुढ़ हो जाय तो हमें अत्यंत प्रसन्नता होगी। विपश्यना विशेषांक प्रकाशित करने का हमारा प्रयास सफल होगा।

आचार्य श्री गोयन्काजी और उनके वे शिष्य जिन्होंने कि इस विशेषांक के लिए सारी सामग्री एकत्र करने में हमारी सहायता की, हमारे लिए साधुवाद के पात्र हैं। हम उनका हृदय से आभार मानते हैं। साथ ही उनको भी धन्यवाद देते हैं जिन्होंने कि हिन्दी लेखों व व टिप्पणियों का अंग्रेजी में अनुवाद किया है।

नव नालन्दा महाविहार, नालन्दा (बिहार)



सुखद-सूचना

जयपुर तथा आसपास के साधकों के सत्प्रयास से जयपुर (राज.) में गस्ताजी के पास एक "विपश्यना साधना केंद्र" की स्थापना की गई है। इसका निर्माण-कार्य बड़ी तेजीसे आगे बढ़ रहा है। सितम्बर के आरंभ तक इसके निर्माण का प्रथम चरण पूरा हो जायेगा। अतः स्थानीय 'विपश्यना-समिति' के आग्रह पर सितम्बर के अन्त में उक्त केंद्र में पूज्य गुरुजी ने एक शिविर देने की स्वीकृति दे दी है। (कार्यक्रम देखें)

इगतपुरी में स्वयं-शिविर

क्रमांक	दि.	२-७-७८ से	१२-७-७८ तक
१	१५	१२-७-७८ से	२२-७-७८
२	१६	२३-७-७८ से	३-८-७८
३	१७	३-८-७८ से	१४-८-७८
४	१८	१५-८-७८ से	२६-८-७८
५	१९	२७-८-७८ से	७-९-७८

- नोट १) स्वयं-शिविर में केवल वे पुराने साधक ही सम्मिलित हो सकेंगे जो कि विद्यापीठ की अनुशासन-संहिता का आत्मविश्वास के साथ कड़ाई से पालन कर सकें।
- २) कोई साधक यदि पूरे शिविर में सम्मिलित न हो सके तो वह अपनी सुविधानुसार बीच में कम दिनों के लिए भी सम्मिलित हो सकता है।
- ३) प्रत्येक अवस्था में आवश्यक है कि व्यवस्थापक से अपना स्थान सुरक्षित रखने की पूर्व स्वीकृत प्राप्त कर ले।
- ४) यथासंभव प्रत्येक शनिवार-रविवार को पूज्य गुरुजी 'धम्मगिरि' पर उपस्थित रहेंगे। अतः जिस साधक को कोई विशेष कठिनाई हो, उनसे मार्ग-दर्शन प्राप्त कर सकेंगे।
- ५) स्वयं-शिविर में अन्य सभी सुविधाएँ उपलब्ध रहेंगी।

आगामी शिविर

शिविर क्रमांक १५० हैदराबाद (वि. अं. सा. के.) दि. १२-७-७८ से २२-७-७८ तक (हिन्दी)
 " १५१ " " " दि. ४-८-७८ से १४-८-७८ तक (हिन्दी)
 संपर्क : श्री रतीलाल एम. मेहता, द्वारा - विपश्यना अन्तर्राष्ट्रीय साधना केन्द्र, १२.६ कि. मी., नागार्जुन सागर रोड, (कुसुम इण्डस्ट्रीज
 कम्पाउंड) कुसुम नगर, हैदराबाद-५०० ०३५ (आंध्र प्रदेश) तार : C/o फूजीयामा फोन नं. : ५९२५९.

शिविर क्रमांक १५२ जयपुर (वि. सा. के.) दि. २०-९-७८ से ३०-९-७८ तक (हिन्दी)
 संपर्क : श्री श्याम सुन्दरजी मुंदड़ा, जी-१-ए, अशोक मार्ग, सी-स्कीम, जयपुर - ३०२००१ (राज.)

तार : डॉली, फोन नं. घर : ६३३२२ कार्यालय : ६५४१४.

नोट :- १) कृपया साधना शिविर में शामिल होने से पूर्व शिविर-व्यवस्थापक के पास अपना नाम रजिस्टर करा लें। किसी कारणवश शिविर में सम्मिलित न हो सकते हों तो कृपया पर्याप्त समय रहते सूचित करें ताकि किसी अन्य प्रत्याशी को स्वीकृति दी जा सके।

२) हिन्दी शिविर में अंग्रेजी प्रवचन सुनने हेतु अंग्रेजी टेप की सुविधा उपलब्ध रहेगी।

३) शिविरों के नियम कड़े होते हैं। उनका कड़ाई से पालन कर सकें तो ही भाग लेना चाहिए।

मेसर्स इण्डो बर्मा रबर इण्डस्ट्रीज
 रामचंद्र लेन, मालाड (प.) बम्बई-४०० ०६४.
 फोन नं. ६९१९५१
 की मंगल कामनाओं सहित।

मेसर्स दयानंद अड्डकिया एण्ड कम्पनी
 ३५०, कालवादेवी रोड, बम्बई-४०० ००२.
 (फोन नं. ३१८२४४)
 की मंगल कामनाओं सहित।

दोहे धरम के

नमस्कार है धरम को, कैसा पावन पंथ !
 चलते चलते स्वयं ही, होय दुखों का अंत ॥
 एक शरण है धरम की, और शरण ना कोय ।
 सत्य वचन के तेज से, सब विधि मंगल होय ॥
 आओ ! मानव मानवी ! चलें धरम के पंथ ।
 धरम-पंथ ही शांति-पथ, धरम-पंथ सुख-पंथ ॥
 आदि माहि कल्याण है, मध्य माहि कल्याण ।
 अंत माहि कल्याण है, कदम कदम कल्याण ॥
 शील माहि कल्याण है, है समाधि कल्याण ।
 प्रज्ञा तो कल्याण ही, पाया पंथ महान ॥
 कितने दिन भटकत फिरा, अंधी गलियां माहि ।
 अब तो पाया राजपथ, वापस मुड़ना नाहि ॥

दूहा धरम रा

धरम सदा रच्छा कैर, धरम कैर प्रतपाल ।
 धरम पालकों की सदा, धरम कैर रखवाल ॥
 धरम दिखायो च्यानणो, धरम दिखायो पंथ ।
 दुख की काळी रात को, इब हो जासी अन्त ॥
 कैर बात तो धरम की, करम कैर बिपरीत ।
 उण मूरख नै सुख कैठै, दुख बढणै री रीत ॥
 स्वजन सनेही धरम ही, धरम हि सांचो मीत ।
 धरम न धोखो देवसी, राख धरम सूं प्रीत ॥
 धरम सदा मंगल कैर, धरम कैर कल्याण ।
 धरम सदा रच्छा कैर, धरम बडो बलवान ॥
 जितनो जितनो धरम है, उतनो उतनो सांत ।
 जितनो छूटै धरम पथ, उतनो हुवै असांत ॥

सयाजी ऊ बा खिन मेमोरियल ट्रस्ट के लिए संपादक, मुद्रक एवं प्रकाशक : रामप्रताप यादव, ग्रीन हाऊस, २ री मंजिल, ग्रीन स्ट्रीट, फोर्ट,
 बम्बई २३. टेलीफोन : २६८६७९. • मुद्रण स्थान : अक्षरचित्र मुद्रणालय, सातपुर, नासिक ४२२ ००७. टेलिफोन ८२५१

पत्रिका में विज्ञापन दर : आधा पृष्ठ रू. ४००/-, चौथाई पृष्ठ रू. २०० /- . • वार्षिक शुल्क रू. ५/-, आजीवन शुल्क रू. ५१/-

“विपश्यना”

पो. रजि. नं. NSK/64

प्रेषक :

To

सयाजी ऊ बा खिन मेमोरियल ट्रस्ट

विपश्यना विश्व विद्यापीठ

धम्मगिरि, इगतपुरी-४२२ ४०३.

(नासिक - महाराष्ट्र)